॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

हे प्रभु! हम यह नहीं चाहते कि संसार में हम आपसे विमुख हो जाएँ। हमारी यह सदैव याचना रहती है कि हम किसी भी स्थान में हों, किसी भी आश्रम में हों, परन्तु हम सदैव आपकी महिमा का गुणगान गाते रहे हैं। क्योंकि आपकी अञ्जलियों में भगवन् यह विश्व पनपता रहता है। हमारी भी एक कामना है कि हमारे मन की जो प्रवृत्तियाँ हैं वह जैसे सूरज की किरणों से प्रातःकाल का अनुभव होता है इसी प्रकार हे प्रभु! हमारा जो जीवन है वह आपकी महिमा में ही पनपने वाला हो। जिससे हे देव! आपकी महिमा का गुणगान गाते हुए यह जो सागर हमें प्रतीत हो रहा है जिसमें नाना प्रकार के कटु-शब्दों की प्रतिभा हमारे समीप आती है, नाना प्रकार की धाराएँ आती हैं, मान-अपमान की तरंगें उत्पन्न होने लगती हैं। प्रभु! मैं यह नहीं चाहता हूँ। मानव जब तेरे द्वार पर आता है तो प्रभु! आप वास्तव में उसका कल्याण तो कर ही देते हैं। परन्तु मेरे हृदय की सदैव यह कामना रहती है कि यदि आपने मुझे संसार में जन्म दिया है तो प्रभु! मेरे जीवन को ऐसा मुग्ध बनाइए जैसे पृथ्वी होती है। वह मेरी माँ है। और कैसी माँ है? वही अन्न देती है और वही हमारे मल-मूत्र को अपने में समेट लेती है। वह किसी भोली माँ है जिसकी ममता का कोई प्रमाण नहीं दे सकता। इसी प्रकार हे प्रभु! आप ममतामयी हैं। जैसे हम आपके प्रति कटु हो सकते हैं परन्तु आप अपनी छाया को हमसे दूर नहीं करते। इसी प्रकार हमारी इच्छा है कि हम कटुता को त्यागते चले जाएँ। आपकी शरण में आते चले जाएँ। एक समय वह आयेगा जब प्रभु हम आपकी गोद में, आपकी अञ्जलि में आ करके हमारा जीवन पुलकित और पवित्र बन सकता है।

–पूज्यपाद गुरुदेव

अंक : 496 समग्र अंक : 571
वर्ष : 42 समग्र वर्ष : 48

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	ब्राह्मण कौन है?	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-23
4.	भगवान्–यज्ञ विधान और विज्ञान	पूज्यपाद-गुरुदेव	24-25
5.	धर्म और यज्ञ	पूज्यपाद-गुरुदेव	26
6.	नरान्तक की उदंग ऋषि से वार्ता	पूज्यपाद-गुरुदेव	27-29
7.	मानव योगी कैसे बनें?	पूज्यपाद-गुरुदेव	30-33
8.	Destiny of the soul...	Pujyapad Gurudev	34-36
9.	दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना आदि		37-40

चतुर्वेद ब्रह्म-पारायण याग

परमपिता परमात्मा की असीम अनुकम्पा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (पूर्व शृङ्गी ऋषि जी) के शुभ आशीर्वाद से प्रति वर्ष की भाँति इस वर्ष भी चतुर्वेद ब्रह्म पारायण महायज्ञ का आयोजन लाक्षागृह बरनावा में श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय के प्रांगण में दिनाँक 2 मार्च, 2014 से 9 मार्च, 2014 तक बड़े हर्ष एवम् उल्लास के साथ आयोजित किया जा रहा है जिसमें आप सब अपने सम्बन्धियों व मित्रों सहित सादर आमन्त्रित हैं।

श्री गाँधी धाम समिति (पंजी.)

सभी को नव वर्ष की हार्दिक शुभकामनाएँ

॥ ओ३म् ॥

ब्राह्मण कौन है

जीते रहो,

देखो मुनिवरो ! अभी-अभी हमारा पर्ययण समय समाप्त हुआ है। हम तुम्हारे समक्ष वेदों का मनोहर पाठ कर रहे थे। आज के वेद पाठ में कई प्रकार का विवरण आया। आज हम पूर्व मन्त्रों में उस विधाता का गान गा रहे थे जिस विधाता ने हमारे जीवन के लिए, हमें ऊँचे कर्म करने के लिये इस संसार रूपी क्षेत्र को उत्पन्न किया। आज हम उस विधाता के गुणगान कहाँ तक गाएँ। वह विधाता मनोहर और अलौकिक है। बड़े-बड़े महान् आचार्य योगीजन उस विधाता के गुणगान करते-करते समाप्त हो गये।

कैसा अद्भुत संसार है यह, किसने रचा है इसको, किसने उस विधाता से याचना की कि आप इस संसार को उत्पन्न करो? आज हमें वेद मन्त्रों से प्रतीत होता है कि यह आत्मा ही उस प्रभु से याचना करने गया था। उस प्रभु ने अपने बालक की याचना को पाकर इस संसार रूपी क्षेत्र को उत्पन्न किया। फिर उसने एक-एक तत्त्व में ऐसे-ऐसे गुण उत्पन्न किये कि जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता। बेटा ! पृथ्वी को ही देखो इसमें नाना गुण हैं। इसमें नित्य-प्रति कहाँ से इतने तत्त्व आ पहुँचे हैं? स्थावर वृक्ष योनियों में ही देखो ! प्रत्येक वृक्ष अपना-अपना रस, अपने-अपने गुण इस पृथ्वी से ही ले रहा है। यह कैसा अलौकिक तत्त्व है? इस पृथ्वी में ऐसे गुण कहाँ से आ गए हैं जिन गुणों की मानव को आवश्यकता है, उन गुणों को प्रेरित करने की शक्ति तथा सत्ता किसने प्रदान की है? बेटा ! इससे बड़ा आश्चर्य होता है कि उस विधाता ने अपनी रचना से इस महान् प्रकृति को प्राण रूपी सत्ता

दी। **इसी को सामान्य प्राण कहते हैं।** मानव के कल्याणार्थ शून्य प्रकृति को प्राण सत्ता देकर, इसको गतिशील बना कर आत्मा को कर्म करने का अवसर दिया।

बेटा ! हमने उस काल को देखा है जिस काल में मुनिवरो ! यहाँ महर्षि पापड़ी मुनि महाराज, अंगिरा मुनि, महर्षि करुण मुनि, कपिल मुनि आचार्य और वशिष्ठ मुनि जैसे आचार्य थे। जिस काल में सब माताएँ तथा देवकन्याएँ अपने एकान्त स्थलों में विराजमान होकर यही सोचा करती थीं कि यह संसार क्षेत्र क्या है? किसने हमें इतना उच्च कर्म करने का अवसर प्रदान किया?

आज हमें भी तो यही विचारना है कि हम ज्ञानी विज्ञानी कैसे बने? परमात्मा के ज्ञान-विज्ञान को कैसे जानें? बेटा ! हमारे आदि आचार्यों ने तथा अन्य माता अरुणा जैसी धर्म-लक्ष्मियों ने इस संसार के तत्त्वों को, परमात्मा के महत्त्वों को प्रकृति के तत्त्वों एवम् गुणों के द्वारा जाना। बेटा ! हमें प्रतीत होता है कि आज इस सृष्टि में उस परमात्मा की ज्योति ही व्यापक है, उसी की ज्योति से यह संसार प्रकाशित हो रहा है।

वेद ज्ञान और उसका महत्त्व

अहा ! कैसा महान् संसार है? कैसा आश्चर्यजनक है? बेटा ! उस परमात्मा की विद्या को पाकर हम सुशील बन जाते हैं। वह विद्या कहाँ से आई? किसने वह विद्या प्रदान की? जिससे मानव का उत्थान हो जाता है। यदि आज हम यह मान लें कि यह विद्या प्रकृति से आई, तो बेटा ! प्रकृति तो जड़ है, ज्ञान शून्य है। यह तो मानव को शून्यता तक पहुँचाने वाली है। तो विद्या कहाँ से आई जो मानव का विकास कर देती है। प्रलय काल में यह विद्या किस स्थान पर थी? जिस काल में यह संसार समाप्त हुआ उस समय यह वेद विद्या कहाँ थी? आज मानव इसके विश्लेषण

पर विचार लगाता है और कई प्रकार से सोचता है। वेदानुयायी महान् आचार्यों की सम्मति पर दृष्टि डालते हैं तो प्रतीत होता है कि परमात्मा इतना पूर्ण ज्ञानी है कि वही जीवात्मा को ज्ञान प्रेरित कर देता है। जीवात्मा उस प्रभु के ज्ञान को पाकर, उसकी वेद-वाणी को पाकर अनेक प्रकार से ज्ञानी और विज्ञानी बन जाता है। उस ज्ञान-विज्ञान की सहायता से ही आज भी हम अपने जीवन को बहुत उच्च और सफल बनाया करते हैं।

प्रश्न होता है कि **यह अद्भुत ज्ञान प्रलय काल में कहाँ रहता है?** प्रलय-काल में यह आत्मा परमात्मा के गर्भ में रहता है। यह वेदज्ञान परमात्मा के स्थानों में रहता है! जैसे बेटा ! बालक का स्थूल शरीर माता के गर्भ में रहते हुए मानव को दृष्टिगोचर नहीं होता। परन्तु जब गर्भ से पृथक हो जाता है तब उसके चक्षु भी हैं, भुजाएँ भी हैं, पद भी हैं, त्वचा भी है, सब इन्द्रियाँ भी हैं। ये सब उत्पन्न होने पर प्रत्यक्ष होते हैं। इसी प्रकार बेटा ! ये सब विद्याएँ प्रलय काल में परमात्मा के गर्भ में चली जाती हैं। परमात्मा के पूर्व नियम के अनुकूल परमात्मा में ही निवास करती हैं।

एक समय हमारे आदि आचार्यों ने दार्शनिक समाज में कहा था कि आत्मा का ज्ञान तो प्राकृतिक है। आत्मा का ज्ञान तो स्वाभाविक है। मुनिवरो ! यह वाक्य यथार्थ है। **आत्मा की दो महान् सत्ताएँ स्वाभाविक हैं।** वे हैं एक ज्ञान और दूसरा प्रयत्न। मुनिवरो ! आज हम आत्मा की सत्ता को इस प्रकार मान लें कि वह कहीं से आती है तो बेटा ! हमें उस सत्ता के जगाने के लिए इस महान् स्थूल प्रकृति में आ करके किसी से वह ज्ञान लेना पड़ता है। किसी से उसके लिए प्रार्थना करनी पड़ती है। जिससे इस आत्मा को ज्ञान होता है, वह अज्ञानान्धकार से पृथक होता है।

मुनिवरो ! देखो जैसे भौतिक विज्ञान के खोजने के लिए हमें प्रकृति के नाना तत्त्वों की आवश्यकता पड़ती है। तब हम उस

ज्ञान-विज्ञान को खोज पाते हैं। इसी प्रकार **आत्मा का जो ज्ञान स्वाभाविक है उसको जगाने के लिए वेद विद्या का प्रसार करना, वेद विद्या को ग्रहण करना पड़ेगा।** जब वेद विद्या की सन्धि आत्मा में पहुँच जाती है, उस समय उस परमात्मा के दिये हुए वैदिक ज्ञान से एक-एक सम्बन्ध हो जाने पर मानव जीवन पूर्ण विकास को प्राप्त हो जाता है। मुनिवरो ! आज के हमारे वेद-पाठ में परमात्मा के दिए इसी उपदेश का वर्णन था! परमात्मा ने हमें वह ज्ञान दिया है जिसे पाकर हम उसके उपासक बन जाते हैं, पवित्र बन जाते हैं। उस अमृत को पाकर हम भी वास्तव में अमृत ही बन जाते हैं। तब वहाँ अमृत-आत्मा आनन्द ही आनन्द भोगता रहता है। बेटा ! वेद की विद्या पाकर हम सुशील बन जाते हैं। सुशील बन कर ही हम दार्शनिक समाजों में जाकर वहाँ नाना प्रकार के प्रश्न कर सकते हैं और हम उन प्रश्नों के उत्तर भी उन ऋषियों और दार्शनिकों से पाने वाले बन जाते हैं।

संसार कर्म क्षेत्र है

मुनिवरो ! हमारे कर्म करने के लिए संसार रूपी क्षेत्र को उत्पन्न करने वाले विधाता से याचना करते हुए हम कर्म करने के लिए उद्यत हो रहे हैं। हमारे आदि आचार्यों ने मानव जीवन की विकासशीलता का अनेक स्थानों पर वर्णन किया। इसी को हम अपने व्याख्यान में कह चुके हैं। महामुनि नारद ने अपने जीवन का पूर्ण विकास किया था। नारद मुनि की विशेषता थी कि वह अपनी तपस्या एवम् पुरुषार्थ के बल से सूर्य-मण्डल में पहुँचे तथा वहाँ के राजा विष्णु को इस पृथ्वी पर खींच लिया। नारद मुनि ने अपनी तपस्या एवम् पुरुषार्थ के प्रभाव से महाराजा विष्णु का अभिमान नष्ट कर दिया। बेटा ! जो भी मानव अभिमान से कार्य करता है, उसका एक न एक दिन पतन अवश्य होता है। वह पार्थिव रूप जड़ता को प्राप्त हो जाता है। आज हमें इसका ध्यान रखना

चाहिये। हमें अपनी तपस्या और पुरुषार्थ के द्वारा सफलता मिलने पर भी थोड़ा सा भी अभिमान नहीं करना चाहिये। हमारे वेद-मन्त्रों में अनेक स्थानों पर वर्णन आ रहा है कि **यह महान् संसार उस परमात्मा को पाने के लिये बनाया है।** इसलिये हमको बहुत अधिक महत्ता की आवश्यकता है।

ब्राह्मण किसे कहते हैं?

मुनिवरो ! देखो, ''ब्राह्मण वर्चति'' इत्यादि आज के वेद-पाठ में नाना प्रकार से ब्राह्मणों का वर्णन आ रहा था। ब्राह्मण किसको कहते हैं? संसार में ब्राह्मण की क्या विशेषता है? बेटा ! **ब्राह्मण कहते हैं ज्ञानी को। प्रत्येक जीवन-यात्री को, प्रत्येक देवकन्या को ज्ञान देकर अमृत तुल्य बना देने में सहायता करने वाले को ब्राह्मण कहते हैं।** उसी को ब्राह्मण उपाधि दी जाती है।

बेटा देखो ! ब्राह्मण तो सूर्य को भी कहते हैं। ब्राह्मण नाम परमात्मा का भी है। सूर्य को ब्राह्मण क्यों कहते हैं? सूर्य प्रातःकाल आते हैं, तीनों लोकों को तपायमान कर देते हैं। ये तीनों लोक उसके महान् प्रताप से, तेज से प्रकाशमान हो उठते हैं। इसी प्रकार ब्राह्मण उसी को कहते हैं जो प्रकाश देने वाला हो। प्रकाश भी कई प्रकार के होते हैं। एक **'अनुमन्तृ'** प्रकाश होता है। जो परमात्मा की महामाया से पृथक होता है। प्राकृतिक ज्ञान मधुमान होता है, बेटा ! यह ज्ञान वेदों के व्याख्यानों से प्राप्त होता है।

आत्मा का प्रकाश भी परमात्मा का दिया हुआ है। परमात्मा हमारी आत्मा में बैठा हमें प्रकाशित कर रहा है। उसी को बेटा ! ब्राह्मणों का ब्राह्मण कहा जाता है। ब्राह्मण उसी को कहते हैं जो प्रकाशमान होता है।

बेटा ! जैसे हमारे शरीरों में मल, विक्षेप तथा आवरण हैं। इन तीनों को अपनी विद्या से समाप्त करने वाले को ही हमारे

आचार्यों ने ब्राह्मण माना है। जो राष्ट्र को ऊँचा बनाने वाला हो, एक साधारण व्यक्ति का भी उत्थान करने वाला हो और जो वेदों के ज्ञान का भण्डार हो, उसी को ब्राह्मण रूप से पुकारा जाता है। मुनिवरो ! इसका वर्णन तो हम अपने पूर्व के व्याख्यानों में कर चुके हैं।

बेटा ! अभी-अभी हम उच्चारण कर रहे थे कि ''ब्राह्मण वर्चति'' इत्यादि। देखो, जो ब्राह्मण सब गुणों वाला बन जाता है उसी को तेजस्वी ब्राह्मण कहा जाता है। एक समय नारद मुनि ने दार्शनिक समाज में कहा था कि यदि ब्राह्मण को **'परायश'** मान लिया जाये तो क्या हानि है। तब आदि ऋषियों में से अंगिरा ऋषि ने कहा था कि अरे ! देवऋषि नारद हम यह नहीं मान सकते। यदि हम ब्राह्मण को 'परायश' मान लेवें तो उसमें नाना प्रकार की हानि हो जायेगी। राष्ट्र अन्धकार में चला जायेगा। ऐसा मानने से हम परमात्मा के बनाये हुए नियमों को व्यर्थ करने का दुस्साहस और पाप करेंगे, समाज तुच्छ बन जायेगा। राष्ट्र की समस्त प्रजा और यह संसार तुच्छता को प्राप्त कर अधोगति को पहुँच जायेगा। हे नारद ! हमें तो उस व्यवस्था को पाना है कि जिससे हम हर प्रकार से योगी बन कर, महान् बन कर अपने ब्राह्मणों को महान् ज्ञान देते चलें जिससे तुच्छता का प्रसार न हो सके। तुच्छता के प्रसार से तो यह संसार अधोगति को प्राप्त हो जायेगा।

पूज्य महानन्द जी — गुरुजी ! आज आपका कुछ ''विश्वाय परमन्तु रूपायनम् अस्तु' हास्य...।

बेटा ! हो जाता है, कोई ऐसी बात नहीं। क्योंकि ''नित्य भूमि अमृति विषयम्।'' और आपत्ति काल में शब्द विभु बन जाता है।

पूज्य महानन्द जी — गुरुजी ! आप ऐसा न कीजिये, इससे महत्त्व समाप्त हो जायेगा।

चलो बेटा ! कोई बात नहीं।

पूज्य महानन्द जी — अच्छा ! कृपा कीजिये।

व्याख्यान में पुनरुक्ति का कारण

मुनिवरो ! अभी-अभी महानन्द जी अपने प्रश्न के समय में कह रहे थे कि हम किसी-किसी वार्ता को द्वितीय बार उच्चारण कर देते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि हम आपत्ति काल में हैं। इसलिये बिना इच्छा के भी यह हो ही जाता है। आपत्ति काल वश इस पर नियन्त्रण नहीं हो पाता अन्यथा हमारे द्वारा किसी वार्ता के बार-बार प्रकाश होने का कोई कारण नहीं।

देखो हमने पूर्व काल में बहुत सी निधियों को पाया। वे आज सूक्ष्म होती जा रही हैं। उन निधियों से अब हमारा कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो पा रहा है। अब तो केवल वह महान् शब्द रूप में अन्तरिक्ष में विराजमान है। अन्तरिक्ष को वह शब्द शुद्ध बना रहा है।

देखो ! आज हमारे वेदपाठ में कई स्थानों पर तेजस्वी ब्राह्मण का वर्णन आ रहा था। वह तेजस्वी ब्राह्मण सबका कल्याण करने वाला होता है। प्रजा को उच्च बनाने वाला होता है। प्रजा में किसी प्रकार के अज्ञान को छाने नहीं देता। जिस काल में ऐसे ब्राह्मणों की संख्या अधिक होती है, उस काल में अज्ञान आता ही नहीं है। मुनिवरो देखो ! ऐसे महान् ब्राह्मण राजाओं को समय पर चेतावनी देने वाले हों। अजय-मेघ-यज्ञ को कराने वाले हों।

'अजय-मेघ-यज्ञ' अथवा 'अजा-मेघ-यज्ञ'

बेटा ! 'अजय-मेघ-यज्ञ' किसको कहते हैं? अजय शब्द के

माता, पृथ्वी, यज्ञ, राष्ट्र और प्रजा अर्थ होते हैं। 'मेघ' शब्द के यज्ञ और राजा अर्थ होते हैं। 'अजा' शब्द के बकरी तथा वेदी अर्थ होते हैं। ब्राह्मणजन वेदी को सजाया करते हैं। यज्ञ को पूर्ण समारोह के साथ करते हैं।

राजा अपनी धर्मपत्नी के साथ राष्ट्र के उत्थान करने में सदा लगा रहे। राष्ट्र के उत्थान के लिए राजा अपनी धर्म-पत्नी के साथ 'अजय मेघ' करता रहे। यह उसका परम कर्त्तव्य है।

अजा नाम पृथ्वी का है। जिस काल में वैज्ञानिकजन एकान्त स्थान में विराजमान होकर पृथ्वी के तत्त्वों को विचारते हैं, नाना प्रकार के अनुसन्धान करके उस भौतिक विज्ञान को पाते हैं तब उसको 'अजा-मेघ-यज्ञ' कहते हैं।

मुनिवरो ! 'गो-मेघ-यज्ञ' भी होता है। 'गो' नाम से पृथ्वी और इन्द्रियाँ दोनों को लिया जाता है। इन्द्रियों के द्वारा विषयों का तथा पदार्थों के गुणों का ज्ञान होता है। पृथ्वी का मुख्य गुण गन्ध हैं। आज गन्ध को जानना है। गन्ध कहाँ से आती है? किस स्थान से प्रकट होती है? कौन-कौन से तत्त्वों से मिलकर बनती है? इसका जानना ही 'गो-मेघ-यज्ञ' कहलाता है।

आज हमारे वेदपाठ में 'अजय-मेघ-यज्ञ' का वर्णन आ रहा था। आज हमें अजय-मेघ-यज्ञ करने का संकेत मिला। 'अजय' के नाना अर्थ हैं। इसलिये **आज हमें विचार कर निश्चय करना चाहिए कि प्रसंग के अनुसार जिस शब्द के जिस अर्थ की आवश्यकता हो, उसी का ग्रहण आवश्यक है। उसी का प्रयोग अनिवार्य है?** अन्य अर्थ का नहीं। उसी से मानव का विकास होगा, उसी से मानव का आत्मा उच्च बनेगा। अन्यथा नहीं।

बेटा ! अभी-अभी प्रसंग चल रहा था कि राजाओं का क्या उद्देश्य है? राजाओं को कैसा यज्ञ करना चाहिए? अर्थात् उनको

'अजय-मेघ-यज्ञ' अथवा 'अजा-मेघ-यज्ञ' करना चाहिए। देखो, बेटा ! अजा नाम प्रजा का है। मेघ नाम राजा का है। दोनों का सम्बन्ध करके यज्ञ किया जाय, उसी यज्ञ को यहाँ 'अजय-मेघ-यज्ञ' कहा जाता है। बेटा ! जैसे महाराजा राम ने त्रेता काल में किया था। राजा रावण ने उस यज्ञ का ब्रह्मा बन करके यज्ञ को पूर्ण किया।

बेटा ! मेघ नाम आत्मा का भी है। अजा नाम इसकी प्रजा का है। आत्मा का सम्बन्धी आत्मा का परिवार है। अन्तःकरण चित्त, बुद्धि और अहंकार यह सब आत्मा का परिवार है। ये ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ भी आत्मा के ही परिवार हैं। इस महान् परिवार को कौन चलाने वाला है? जब हम आत्मा को और उसके परिवार को भली प्रकार से जान जाते हैं तब हम स्वतः ही उस महान् राजा को जान लेते हैं, उस मेघ को जान लेते हैं। तब हम आत्म तत्त्व के जानकार बन जाते हैं। इसी प्रकार जो राजा अजय-मेघ-यज्ञ करने वाले होते हैं ये प्रजा के भावों को जान लेते हैं। साथ में राष्ट्र के ब्राह्मणों की परीक्षा हो जाती है कि मेरे राष्ट्र में कैसे-कैसे बुद्धिमान ब्राह्मण हैं?

मुनिवरो ! इस समय **सतयुग के काल की एक वार्ता** हमारे कण्ठ (स्मरण) आ गई है। हम उसका उच्चारण करेंगे। उसके पश्चात् हमारी वार्ता समाप्त हो जायेगी। मुनिवरो ! सतयुग में अटुल मुनि महाराज महीयस राजा के पुरोहित थे। एक समय राजा अपने राज-स्थान में विराजमान थे, न्यायालय में प्रजा का न्याय कर रहे थे। उस समय उनके हृदय में विचार आया कि हमें ''अजय-मेघ-यज्ञ'' करना चाहिये। अजय-मेघ-यज्ञ किसके लिए करना चाहिए? प्रजा के लिए करना चाहिए जिससे हमारी प्रजा महान् बने। जिससे हमारी प्रजा में सदाचार हो। प्रजा के ज्ञान विज्ञान की वृद्धि हो, हमारे राष्ट्र में वेदों का प्रसार हो। प्रत्येक गृह में यज्ञ हों, यजन से हमारे

राष्ट्र का वातावरण सुगन्धिदायक हो, यजन से राष्ट्र सुगन्धिदायक बनेगा।

बेटा ! राजा के मन में इस विचार के आने के पश्चात राजा ने अपने मन में संकल्प-विकल्पों द्वारा बड़ा अनुसन्धान किया। इस विचार को लेकर राजा अपने गुरु पुरोहित के समक्ष आ पहुँचे। अटुल मुनि महाराज ने राजा का बड़ा स्वागत करके कहा-''प्रिय ! आनन्द में हो?

राजा ने उत्तर में कहा ''विशेष आनन्द है।''

अच्छा, धन्यवाद। कैसे आगमन हुआ?

उन्होंने कहा भगवन् ! हम इसलिए आए हैं कि इस काल में हमारी एक 'अजय-मेघ-यज्ञ करने की इच्छा है। जिससे हमारी प्रजा श्रेष्ठ बने, हमारी प्रजा में महत्ता आये।

'अजय-मेघ-यज्ञ' का अधिकारी

मुनिवरो ! राजा की इन वार्ताओं को सुनकर अटुल मुनि महाराज ने बहुत प्रसन्न होकर कहा कि तुम्हारी इस वार्ता को सुनकर तथा निष्ठा एवम् योग्यता को देख कर हमें निश्चय हो गया कि तुम 'अजा-मेघ-यज्ञ' करने में अवश्य सफल हो जाओगे। परन्तु वेद विद्या कहती है और परम्परा भी यही बतलाती है कि **अजय-मेघ-यज्ञ करने का उसी राजा को अधिकार है कि जिसकी प्रजा में एक दूसरे का कोई भी ऋणी न हो।** हमको पता नहीं है कि तुम्हारी प्रजा में क्या सभी ऋण मुक्त हैं? पहले आप इसका अनुसन्धान कीजिये।

राजा ने गुरुदेव की आज्ञा पा करके कहा कि मैं राज्य में भ्रमण करके देखूँगा कि मेरी प्रजा में कोई एक दूसरे का ऋणी तो नहीं है। बेटा ! राजा वहाँ से चलकर विचार करते अपने राष्ट्र में

पहुँचे। प्रजा में भ्रमण करके देखा कि प्रत्येक गृह में नित्य प्रातःकाल यज्ञ हो रहे हैं। राष्ट्र में एक दूसरे का कोई ऋणी नहीं था। प्रजा सब प्रकार कुशल से है। प्रजा में बड़ा आनन्द छा रहा है। पिता की सेवा करने वाले पुत्र हैं। उनको योग्य बनाने के लिए माता-पिता भी कुशल हैं। राजा ने देखा कि उसके द्वारा बनाए गये नियम राष्ट्र में बड़े आनन्द से चल रहे हैं। क्षत्रिय राष्ट्र की रक्षा कर रहे हैं। राजा अपने राष्ट्र की ऐसी स्थिति और कुशलता को देख कर बड़ी प्रसन्नता के साथ चलकर राजपुरोहित गुरु के समक्ष जा पहुँचे। गुरु से कहा कि भगवन् ! मेरे राज्य में तो बहुत कुशल है। मेरे राष्ट्र में कोई किसी का ऋणी नहीं है। मेरा राष्ट्र सब प्रकार से महान् है।

उस समय राजा की इन वार्ताओं को पाकर ऋषिवर बड़े प्रसन्न होकर बोले कि भाई ! अजय-मेघ-यज्ञ करो। **परन्तु यज्ञ करने से पूर्व तुम अपनी धर्मपत्नी से अनुमति लेकर आओ।** वह तुम्हें अनुमति दे तो अवश्य यज्ञ करो अन्यथा तुम्हें कोई अधिकार नहीं है।

उस समय बेटा ! राजा वहाँ से चलकर राजगृह में जा पहुँचे। राजा के पहुँचते ही पत्नी ने चरणों को स्पर्श किया। नमस्कार करके राजा का बड़ा स्वागत किया। आसन पर विराजमान होकर धर्मपत्नी ने कहा कहिये भगवन् ! आपका मन कैसे भ्रमित हो रहा है, इसका क्या कारण है? आज हमको प्रतीत हो रहा है कि आपको किसी प्रकार का शोक है या किसी प्रकार की विशेष अशान्ति है। उस समय राजा ने कहा कि हे धर्मपत्नी ! मेरे मन में कोई शोक नहीं है। मेरा मन इसलिए भ्रमित है कि मैं अजय-मेघ-यज्ञ करने जा रहा हूँ। राजगुरु पुरोहित ने कहा है कि तुम अपनी धर्मपत्नी की अनुमति लेकर यज्ञ करो, तो तुम्हारी क्या इच्छा है?

उस समय धर्मपत्नी बड़ी मग्न हो गई। उसके हृदय के कपाट खुल गए, हृदय ज्योति जागने लगी। धर्मपत्नी ने कहा कि भगवन् ! मेरे अहो भाग्य आप यजमान बनकर अजय-मेघ-यज्ञ रचावें, देवताओं को हम कुछ देवें, जिससे हमारे राष्ट्र का उत्थान होवे। यह तो भगवन् ! बहुत सुन्दर विचार है।

मुनिवरो ! देखो, धर्मपत्नी से अनुमति लेकर राजा ने वहाँ से चलकर, ऋषिवर के समक्ष जाकर कहा कि-भगवन् ! मेरी धर्मपत्नी बड़ी ही प्रसन्न है। उसका वाक्य है कि हमारे ऐसे सौभाग्य कहाँ? उसका हृदय मुग्ध होने लगा। ऐसा प्रतीत होने लगा कि उसके हृदय में धर्म की अग्नि प्रज्वलित हो रही हो।

यज्ञशाला क्यों रचाई जाती है?

बेटा ! उस समय ऋषिवर ने इन वाक्यों को पाकर के नाना ब्राह्मणों को निमन्त्रण देकर वहाँ एक विशाल यज्ञ रचाया, वहाँ बड़ी सुन्दर यज्ञशाला रचाई गई। यज्ञशाला के रचने से वहाँ अक्षय आनन्द छा गया। नाना प्रकार की चित्रकारियों से वह यज्ञशाला रचाई गई। सब देवताओं के स्थान बनाए गए। वेदी वही होती है जिसे बेटा ! ब्राह्मण बुद्धिमत्ता के साथ वेद के अनुकूल रचाता है। उस समय महर्षि जी से राजा ने प्रश्न किया कि भगवन् ! यह यज्ञशाला क्यों रचाई जाती है? इसका क्या कारण है कि इतनी चित्रकारी की जाती है? बेटा ! तब ऋषि ने उत्तर दिया कि देखो, जैसे परमात्मा ने इस संसार रूपी यज्ञ को उत्पन्न किया है, उसको इतनी चित्रकारियों से सजाया है ऐसे ही हम छोटे से वैज्ञानिक हैं, परमात्मा के बालक हैं। परमात्मा जैसे यज्ञ तो नहीं रचा सकते पर उसके बालक जैसा यज्ञ रचा सकते हैं। हम तो उनका सूक्ष्म सा रूप ले रहे हैं कि जो चित्रकारियों से इस यज्ञशाला को रचाया है। मुनिवरो ! देखो, ऋषिवर ने जब यह उत्तर दिया तो राजा बड़े मग्न हो गए। मग्न होकर कहा धन्यवाद। उसके बाद वहाँ नाना प्रकार

की सामग्री एकत्रित हो गई। सब साकल्य एकत्रित हो गया। प्रजा को निमंत्रण दिया गया। यजमान, यजमान की धर्म पत्नी यज्ञशाला में विराजमान हो गए। वहाँ शुनि मुनि महाराज, पापड़ी मुनि महाराज, दोनों उस यज्ञ के उद्गाता बने। अटुल मुनि महाराज, उस यज्ञ के अध्वर्यु बने। तत्त्व मुनि महाराज उस यज्ञ के ब्रह्मा बने। इसके अनन्तर यज्ञ आरम्भ हो गया। बेटा ! **ब्रह्मा के ऊपर यज्ञ का भार होता है।** ब्रह्मा ने विधिपूर्वक यज्ञोपवीत धारण करा कर समुद्र की क्रिया आरम्भ की। जब वहाँ समुद्र की क्रिया हो रही थी उस समय समय पापड़ी ऋषि महाराज आ पहुँचे।

दार्शनिक समाज

बेटा ! उस काल में वहाँ शोलक ऋषि आदि ऋषियों का एक दार्शनिक समाज विराजमान था। दार्शनिक समाज में पापड़ी ऋषि को नियुक्त किया गया कि जाओ परीक्षा करो कि वे कैसे बुद्धिमान हैं? राजा अजय-मेघ-यज्ञ के अधिकारी हैं या नहीं? यदि नहीं हैं तो यज्ञ में कहना चाहिए कि तुम अजय-मेघ-यज्ञ के अधिकारी नहीं हो। तो उस समय महर्षि पापड़ी मुनि जी उस दार्शनिक समाज से यहाँ जा पहुँचे।

यज्ञ में जल सिंचन क्यों?

जिस समय तत्त्व मुनि जी उस यज्ञ के ब्रह्मा जल सिंचन करा रहे थे कि उस समय पापड़ी ऋषि ने प्रश्न किया कि महाराज ! यह जल सिंचन क्यों हो रहा है? यह क्या क्रिया है? और क्या पदार्थ है?

उस समय ऋषिवर ने उत्तर देते हुए कहा कि यह महान् समुद्र है जैसे परमात्मा ने इस महान् संसार को उत्पन्न किया। उसके मध्य में पृथ्वी बनी हुई है। ऐसे ही यह वेदी नाम की पृथ्वी है। इसके आस पास ही यह समुद्र बना हुआ है। उस परमात्मा

द्वारा उत्पन्न आकर्षण शक्ति, उसकी महान् विद्युत के आधार पर यह पृथ्वी स्थित है।

आज हम यजमान देवताओं का शाकल्य बनाने के लिए उन समुद्रों के विश्लेषणात्मक दृष्टि से उनके स्वरूप को समझ कर, उसके गुणों से लाभ उठाते हुए वेद के अनुकूल इस वेदी का कर्मकाण्ड कर रहे हैं। मुनिवरो ! तब ऋषि जी बड़े आनन्द के साथ विराजमान हो गए। यज्ञ आरम्भ होने लगा। महर्षि पापड़ी ने सोचा कि ब्रह्मा तो वास्तव में योग्य है। तब उन्होंने ब्रह्मा से प्रश्न किया कि भगवन् ! यज्ञ क्यों रचाया गया है? आपका क्या कर्त्तव्य है?

यज्ञ में ब्रह्मा का कर्त्तव्य

उस समय ब्रह्मा ने कहा कि मेरा कर्त्तव्य है कि मैं यह देखूँ कि यज्ञ का कोई उद्गाता वेदमन्त्र तो अशुद्ध उच्चारण नहीं कर रहा। यदि यज्ञशाला में वेद मन्त्र का अशुद्ध उच्चारण हो गया तो बड़ा पाप होगा। वह पाप क्या हो जाएगा? क्योंकि जिस वेद वाणी के द्वारा हम जिन देवताओं का आह्वान करके उनका स्वागत कर रहे हैं, यदि वही वेदवाणी अशुद्ध होगी तो देवता हमारे समक्ष क्यों आयेंगे? जैसे लोक में जब बुद्धिमान व्यक्ति हमारे समक्ष आते हैं और हम बुद्धिपूर्वक उनका स्वागत नहीं करते हैं, हम मूढ़ बुद्धि से स्वागत करते हैं तो वे बुद्धिमान हमारे समक्ष आना त्याग देते हैं। ऐसे ही वेद मन्त्रों के यज्ञवेदी पर अशुद्ध उच्चारण से देवता हमारी उपेक्षा कर देंगे। तब यह सब कर्मकाण्ड निष्फल हो जाएगा। इसी प्रकार मुनिवरो ! वेद मन्त्रों के यज्ञ में यज्ञ वेदी पर शुद्ध उच्चारण का अभिप्राय है।

जिन देवताओं को साकल्य देना है हम उन्हीं देवताओं का शुद्ध मन्त्रपाठ के द्वारा आह्वान कर रहे हैं, उन्हीं से याचना कर रहे हैं। यदि मन्त्रोच्चारण अशुद्ध हुआ तो देवता हव्य पदार्थों को कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे। परिणाम यह होगा कि वे हमारे संसार का

कदापि कल्याण नहीं करेंगे। मुनिवरो ! महर्षि पापड़ी जी इन वार्ताओं को पाकर बड़े मग्न हो गए। उन्होंने आनन्द में मग्न होकर कहा कि अहोभाग्य है कि जहाँ ऐसे ब्रह्मा हों तथा जहाँ इतनी विद्वता के साथ वेदों के मन्त्रों का उच्चारण शुद्ध होता है।

उद्गाताओं का कर्त्तव्य

मुनिवरो ! इसके पश्चात् पापड़ी ऋषि उद्गाताओं के समीप पहुँच कर बोले—हे उद्गाताओं ! तुम जो वेदों का पाठ कर रहे हो इसका क्या अभिप्राय है? यह क्यों कर रहे हो?

उद्गाताओं ने उत्तर दिया कि भगवन् ! यह हमारा कर्त्तव्य है कि वेदों के मन्त्रों का शुद्ध उच्चारण पूर्वक पाठ करके वेदों की विद्याओं का प्रसार करें। हमारी आत्मा का उत्थान हो और हम देवताओं में रमण करें। वेद मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण के साथ यजन करते हुए साकल्य तथा हव्य पदार्थों को देवताओं के समक्ष प्रस्तुत करके देवताओं से प्रार्थना कर रहे हैं कि हे देवताओं ! आइये, हमारे साकल्यों को, इन हव्य पदार्थों को ग्रहण करो। भगवन् ! हमारे लिये प्रत्येक प्रकार से कल्याणकारी बनो। मुनिवरो ! देखो, तब ऋषिवर ने सोचा कि भाई ! यह उद्गाता भी बड़े बुद्धिमान हैं।

अध्वर्यु का कर्त्तव्य

इसके पश्चात् पापड़ी ऋषि महाराज अध्वर्यु (महर्षि अटुल मुनि महाराज) के समक्ष पहुँचकर बोले कि हे भगवन् ! आप नाना प्रकार की सामग्री एकत्रित करके यजन करते हुए देवताओं को साकल्य दे रहे हैं, वह क्यों दे रहे हैं? इसका क्या अभिप्राय है?

उन्होंने उत्तर दिया कि **यह मेरा कर्त्तव्य है कि मैं शुद्ध रूप से देवताओं को शुद्ध सामग्री दूँ। जिससे कि देवताओं का आहार शुद्ध हो।** यदि देवताओं का आहार शुद्ध होगा तो हमें देवताओं से श्रेष्ठ प्राण-सत्ता मिलेगी।

आज हमें वह महत्ता प्राप्त करनी चाहिए कि जिससे हमारा जीवन, राष्ट्र का जीवन, संसार के मानव का जीवन उच्च बने और विद्या का प्रसार हो। वेदों के अनुकूल बनी सामग्री की आहुतियाँ देने से देवता उसको स्वीकार करते हैं।

यजमान की आहुतियों का महत्त्व तथा भावनाओं का स्वरूप

मुनिवरो ! इन वार्ताओं को पाकर ऋषिवर यजमान के समक्ष जा पहुँचे और बोले कि हे यजमान ! तुम जो ये आहुतियाँ दे रहे हो इनका क्या अभिप्राय है?

राजा ने कहा हे ऋषिवर ! हम आहुति देने के साथ-साथ प्रार्थना कर रहे हैं कि हे प्रभु ! आपने हमारे राष्ट्र को तथा इस सारे संसार को उत्पन्न किया है। हे विधाता ! हे देवताओं ! हमारे राष्ट्र में शुद्ध ज्ञान प्रकाश हो, सद्भावनाओं वाले व्यक्ति हों, जिससे हमारे राष्ट्र में घृत-दाता पशुओं की हानि न हो। हे भगवन् ! यदि हमारे राष्ट्र में गौओं की हानि हो जाएगी तो मेरा राष्ट्र आज नहीं तो कल नष्ट हो जाएगा। हे विधाता ! हे देवताओ ! मैं यह सद्भावना पूर्वक आहुति दे रहा हूँ कि हमारे राष्ट्र में पशुओं की वृद्धि हो तथा मेरा राष्ट्र प्रत्येक प्रकार से विशाल हो।

यजमान की धर्मपत्नी की भावनायें

मुनिवरो ! यजमान से इस प्रकार वार्ता सुनकर ऋषिवर ने यजमान की धर्मपत्नी के समक्ष पहुँचकर कहा कि हे धर्म देवी ! तुम्हारी आहुति देने का क्या मन्तव्य है? उस समय धर्म देवी ने कहा कि ऋषिवर ! आप तो बड़े बुद्धिमान हैं, आप ऐसे वाक्य क्यों उच्चारण कर रहे हैं जो कि आपके योग्य नहीं हैं। तब ऋषिवर ने कहा कि आप भी अपना कुछ विचार तो उच्चारण कीजिये। उस समय धर्म देवी ने कहा कि हे विधाता ! मैं मन के इस संकल्प के साथ आहुति देती हुई याचना कर रही हूँ कि हे देव ! हे परमात्मन् !

हम शुभ कार्य करते रहें। मेरे स्वामी के राष्ट्र में शुभ कार्य होते रहें, अशुभ कार्य न हों। मेरे स्वामी के राष्ट्र में कोई भी मानव, कोई भी देव कन्या दुराचारी न हो। हे भगवन् ! हे ऋषिवर ! जिस राष्ट्र में देव कन्याएँ व पुरुष दुराचारी हो जाते हैं उस राजा का राज्य आज नहीं तो कल अवश्य समाप्त हो जायेगा। हे भगवन् ! मेरी यह प्रार्थना है कि प्रत्येक देव कन्या, प्रत्येक मानव उच्च विचार वाला महान् सदाचारी हो जिससे मेरे स्वामी का राष्ट्र एक विशाल राष्ट्र बने और ऐसे धर्म के कार्य प्रत्येक स्थानों में होते रहें जिससे राष्ट्र में बुद्धिमानों का प्रसार हो। **बिना वेद के प्रचार के राष्ट्र के मानवों में कभी सात्विक बुद्धि नहीं आती है।**

मुनिवरो ! जब ऋषिवर ने इन वाक्यों को पाया तो ऋषि चकित हो गए। ऋषि जी ने कहा कि भगवन् ! यह तो वास्तव में 'अजय-मेघ-यज्ञ' करने के अधिकारी हैं।

यज्ञ में ऋत्विजों का कर्त्तव्य

इसके पश्चात् ऋषि आहुतियाँ देते हुए ऋत्विजों के समक्ष पहुँचे। ऋषि ने ऋत्विजों से प्रार्थना की कि भगवन् ! आप लोग जो ये आहुतियाँ दे रहे हैं, इसका क्या अभिप्राय है?

उस समय ऋषिवर के वाक्यों को पा करके ऋत्विजों ने कहा कि भगवन् ! हम याचना कर रहे हैं कि हे विधाता ! हमारे में जो दुर्गुण एवम् दुर्गन्धियाँ हैं उनको समाप्त करके हमारे में सुगन्धि प्रविष्ट करें। जब हमारा जीवन सुगन्धिदायक बनेगा, तब हमारा जीवन महान् बनेगा। हम राष्ट्र के तथा संसार के हितैषी बनेंगे। हे विधाता ! हम हर प्रकार से हितैषी बनकर, संसार को सुख पहुँचा कर देवताओं के समक्ष पहुँचे। मुनिवरो ! ऋषिवर इन वाक्यों को पाकर शान्त हो गए।

मुनिवरो ! यह तो यथार्थ में यज्ञ का वर्णन था। आगे आलंकारिक वर्णन आता है।

समिधाओं एवम् सामग्री का आलंकारिक रूप में वर्णन

मुनिवरो ! ऋषि जी महती समिधाओं के समक्ष पहुँचे और समिधाओं से कहा कि हे समिधाओं ! यह क्या हो रहा है? तुम अग्नि में प्रविष्ट हो रही हो और अग्नि तुम्हें नष्ट कर रही है। तुम अग्नि का आहार बन रही हो इससे तुम्हारा क्या मन्तव्य है?

बेटा ! देखो, उस समय समिधाओं ने कहा कि हे विधाता ! **संसार में वही मानव सुख पाता है जो किसी का बन जाता है।** देखो, ऋषि जब ही बनता है जब गुरु की शरण में चला जाता है। गुरु उसके दुर्गुणों को नष्ट कर देते हैं, अग्नि-विद्या को धारण करा देते हैं तभी वह ऋषि बनता है। इसी प्रकार विधाता ! हम अग्नि रूप गुरु के समक्ष जाकर अपने पार्थिव परमाणुओं को समाप्त करके अपने सूक्ष्म रूप को धारण करके सूर्य-मण्डल तक पहुँच कर देवताओं की शरण में चली जाती हैं। महान् आदित्य हमको धारण करके, आहार करके, धीमी-धीमी किरणों के द्वारा समुद्रों में पहुँचा देते हैं। समुद्रों से मेघ के रूप को धारण करके वृष्टि द्वारा पृथ्वी पर आ जाती हैं। पृथ्वी पर स्थावर सृष्टि के रूप में उत्पन्न होकर हम संसार का कल्याण करती हैं।

मुनिवरो ! ऋषि जी उनके युक्ति-युक्त उत्तर से सन्तुष्ट होकर सामग्री के समक्ष पहुँचे। **उन्होंने सामग्री से प्रश्न किया कि तुम यह क्या कर रही हो?** तुम अग्नि के समक्ष जाकर उसमें क्यों भस्म हो रही हो? इससे तुम्हारा क्या अभिप्राय है, तुम्हें इसमें क्या लाभ प्रतीत होता है?

उस समय उस महती सामग्री ने कहा था कि हे विधाता ! नाना प्रकार की वस्तुओं को एकत्रित करके हमको बनाया गया है। इसके अनन्तर हमको अग्नि के अर्पण कर दिया जाता है। अग्नि

हमको भस्म कर देती है। हमारा सूक्ष्म रूप बनकर अन्तरिक्ष में, आदित्य में पहुँच जाता है। जब हम आदित्य में रमण करती हैं, तब आदित्य हमें बल देता है। उस बल से किरणें उत्पन्न होती हैं जो समुद्रों में जाती हैं। समुद्रों से जल का उत्थान होता है, जल से मेघ बन जाते हैं। मेघों से वृष्टि होती है। वृष्टि से पृथ्वी पर नाना प्रकार की समिधाएँ तथा नाना प्रकार की सामग्रियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

ज्ञानाग्नि में स्नान ही जीवन की सफलता है

संसार में उसी का जीवन उच्च है कि जो किसी का हो जाता है। जो किसी का नहीं होता वह संसार में अधूरा बना बैठा रहता है। देखो, जब तक ज्ञान रूपी अग्नि में आत्मा ने स्नान नहीं किया, अपने दोषों को भस्म नहीं किया, तब तक आत्मा परमात्मा से विमुख ही रहता है। भगवन् ! इसी प्रकार जब तक हम अपने रूप को अग्नि में भस्म न कर देंगे, तब तक हमारा यथार्थ रूप देवताओं के समक्ष नहीं आयेगा तथा तब तक हम संसार का कोई उपकार न कर सकेंगे। यदि हम उपकार न कर सकें तो हमारा जीवन निष्फल है।

मुनिवरो यह है हमारा आज का आदेश जो हो रहा था। यह कैसा सुन्दर वाक्य आज हमारे वेदपाठ में आया। इस पर सतयुग की कैसी सुन्दर वार्ता हमारे कण्ठ में आ गई। आज के हमारे आदेशों का अभिप्राय क्या है—अच्छे, ब्राह्मण कैसे हों?

यथार्थ विद्या के खोजी हों, सबकी परीक्षा करने वाले हों। राजाओं को उपयुक्त प्रकार की कल्याणमयी शिक्षा देने वाले हों। बेटा ! यह है आज का हमारा आदेश। अब हमारा आदेश समाप्त हो गया।

पूज्य महानन्द जी — गुरुजी आपने जैसा रूप ब्राह्मणों का वर्णन किया, वैसा आधुनिक समय में नहीं रहा है। जब हम अपने

सूक्ष्म शरीर के द्वारा लाक्षागृह पर विचरण कर रहे थे तब हमने सुना कि आधुनिक समय में तो ब्राह्मण जातिवाद बन गया है। गुण, कर्मों के अनुकूल ब्राह्मणादि नहीं रहा है।

बेटा ! समय मिलेगा तो कल तुम्हें उच्चारण कर देंगे। वास्तव में तो इस विषय का व्याख्यान तो हमने पूर्व समय में उच्चारण कर दिया था।

पूज्य महानन्द जी — जो आपने इसे पूर्व उच्चारण कर दिया तो क्या द्वितीय बार उच्चारण नहीं कर सकते?

"नहीं बेटा ! इसमें हमारी कुछ हानि नहीं है।"

पूज्य महानन्द जी — "तो कृपा कीजिए।"

"अच्छा बेटा ! कल देखा जाएगा।"

पूज्य महानन्द जी — "कल तो भगवन् ! आपका होता ही नहीं ! क्योंकि कल जो आपने अपने आपत्ति काल को कहा था वह भी नहीं हुआ। जैसे रावण कल ही कल में मृत्यु को प्राप्त हो गया वैसे ही हमें प्रतीत होता है कि कल ही कल में आप भी मृत्यु को प्राप्त हो जायेंगे।

हास्य..."अच्छा महानन्द जी ! यह तो तुम आनन्द की वार्ता उच्चारण कर रहे हो।"

पूज्य महानन्द जी — हास्य..."गुरुजी ! प्रतीत ही ऐसा हो रहा है क्योंकि रावण भी कल ही कल में समाप्त हो गया था।

हास्य...तो बेटा ! जैसा कल समय आएगा, वैसा उच्चारण करेंगे। तुम तो आनन्द की वार्ता उच्चारण कर रहे हो।

पूज्य महानन्द जी — अच्छा भगवन् ! तो कल आएगा तो आप उच्चारण कर ही देंगे। क्योंकि कल की वार्ता तो आपने पूर्ण कर ही दी। आज की कल और कर देंगे।

हास्य...अरे तो भाई ! कल आएगा तभी तो।

पूज्य महानन्द जी — अच्छा भगवन् !

मुनिवरो ! अभी-अभी महानन्द जी कुछ आनन्दित वार्ता उच्चारण कर रहे थे। किसी-किसी स्थान में हम उनकी वार्ताओं से बड़े प्रसन्न हो जाते हैं। अच्छा बेटा ! कल तुम्हें वर्ण-व्यवस्था पर उच्चारण कर देंगे।

पूज्य महानन्द जी — यह तो भगवन् आप की इच्छा है।

हाँ बेटा ! कल समय मिलेगा तो अवश्य उच्चारण कर देंगे।

पूज्य महानन्द जी — अच्छा भगवन् ! इसमें हमारा कोई विरोध नहीं है।

अच्छा तो बेटा ! अवश्य निर्णय करेंगे कल।

पूज्य महानन्द जी — भगवन् ! क्योंकि हम आधुनिक काल में भी पाते रहते हैं कि वर्ण व्यवस्था जातिवाद से मानी गई है। आपका जो वह पूर्व काल था, उसमें कैसी वर्ण व्यवस्था थी? आधुनिक काल की वार्ता तो हमने उच्चारण कर दी कि अब कैसे ब्राह्मण माने गए हैं।

अच्छा, कल का कल देखा जाएगा, कल ही उच्चारण कर देंगे। अब तो समय समाप्त हो गया है। तो मुनिवरो ! कल महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देने का प्रयत्न करेंगे। अब हमारा वेद पाठ होगा, इसके पश्चात् हमारी वार्ता समाप्त होगी।

दिनाँक : 2 अप्रैल, 1962

स्थान : लाजपत नगर, नई दिल्ली

॥ ओ३म् ॥

भगवान्—यज्ञ विधान और विज्ञान

आज मुनिवरो ! सँसार में इस प्रकार के बहुत से वाक्य हैं जो हमारी बुद्धि से पृथक् हैं। पृथक् होते हुए भी वे हैं अवश्य और उनका अस्तित्व भी है। आज हमारे वेद-पाठ में दो प्रकार के यज्ञों का वर्णन हो रहा था। एक यज्ञ आत्मिक होता है और दूसरा भौतिक। भौतिक यज्ञ कैसे करें? इस पूजा को कैसे कल्याणकारी बनायें यह भी मानव का विचारणीय विषय है। हमारे आदि ब्रह्मा ने एक वाक्य कहा था कि तुम संसार में जा तो रहे हो पर सँसार की स्थिति तो जानो ! वहाँ जाकर अपने उच्च विधान से कार्य करोगे तो तुम्हारा विधान उच्च रहेगा अन्यथा तुम्हारा विधान सब सूक्ष्म बन जाएगा। यदि प्रजा या एक-दूसरे प्राणी को ऊँचा बनाना है तो पूर्व स्वयँ ऊँचे बनो। यज्ञ करना है और यज्ञ द्वारा प्रजा को लाभ पहुँचाना चाहते हो तो सबसे पूर्व यज्ञ को विधान से रचाओ। उन सब क्रियाओं से रचाओ जो हमारे महर्षियों ने वर्णन की हैं और वेदों के अनुकूल हैं। **बिना विधान यज्ञ करने से यज्ञ न करने के बराबर हो जाता है।**

मुनिवरो ! एक समय हमारे महानन्द मुनि ने प्रश्न किया था कि यज्ञ की कितनी प्रकार की परिपाटी होती है और यज्ञ का कैसा विधान होता है। आज वेद का वही प्रकरण आ गया है जो महानन्द जी ने अब से बहुत पूर्व प्रश्न किया था। आज का वेदपाठ यही कह रहा है कि यदि यज्ञ रचाओ तो उसकी क्रियाओं को पूर्व ही जान कर करो। सूक्ष्म यज्ञ रचाओ या विशाल यज्ञ, उसके लिए पहले से ही उच्च विधान बनाने की आवश्यकता है। उसके लिए सुन्दर तथा महान् योजना बनाओ। जिससे तुम्हारे लिए सभी प्रकार के देवता लाभदायक हों, जिन्हें तुम आह्वान करके हव्य पदार्थ अर्पण करना चाहते हो। हमारा वाक्य केवल यह नहीं कि आज हम हव्य से ही इस सुविधा को बनायें। ऊँची भावनाएँ बनाओ और ऊँची भावनाओं से देवताओं का अच्छी प्रकार

पूजन करना चाहिए क्योंकि हम जब तक किसी ऊँचे व्यक्ति के लिए या ऊँचे देवताओं के लिए सुन्दर कार्य नहीं करते तब तक वह देवता हमें न कोई महत्त्व, न वाणी, न प्रकाश, न प्राण ही प्रदान करेंगे।

मुनिवरो ! यह आज का वेदपाठ कह रहा था कि **यज्ञ करो तो विधान से करो और चुनकर करो। उद्गाता चुनो, अध्वर्यु चुनो, ब्रह्मा चुनो और महान् यजमान चुनो।** मुनिवरो ! यजमान के विधान में ऐसा कहा गया है, हमारे महर्षियों ने, **आदि ब्रह्मा ने तथा महर्षि तत्ववेतु मुनि महाराज ने ऐसा कहा है कि यजमान की धर्मपत्नी के बिना यज्ञ सफल नहीं होता।** राजा रावण ने राजा राम के यज्ञ कराते समय कहा था कि "जब तक तुम्हारी धर्मपत्नी न होगी तब तक यज्ञ की क्रिया अच्छी प्रकार न होगी और हे राम ! तुम्हारा यज्ञ कदापि सफल नहीं होगा। तो मुनिवरो ! आज महानन्द जो प्रश्न कर रहे हैं कि उन्होंने यज्ञ किस प्रकार किया और कैसे किया?

मुनिवरो ! उसका कुछ सूक्ष्म रूप हम तुम्हारे समक्ष आज वर्णन करेंगे। यज्ञ जो होना चाहिए विधान के अनुकूल ही होना चाहिए, जिससे मानव का जीवन ऊँचा बने। यह जो मानव का शरीर है, यह भी एक प्रकार का यज्ञ है। आज तुम इस शरीर रूपी यज्ञ के लिए नाना प्रकार की अशुद्ध आहुतियाँ देते रहो, अशुद्ध भोजन देते रहो तो यह तुम्हारा शरीर रूपी यज्ञ नष्ट हो जायेगा। तुम्हारा जीवन भी नष्ट हो जायेगा। यदि तुम शरीर को अच्छा पदार्थ नहीं दोगे तो वह तुम्हें कदापि अच्छी बुद्धि नहीं देगा। तो मुनिवरो ! **जो तुम यज्ञ करो उसमें संकल्प भी महान् ऊँचे होने चाहिएँ।** जैसे परमात्मा ने हमारे शरीर को विधान से बनाया है। इसमें वायु भी है, अग्नि भी है, अन्तरिक्ष भी है, जल भी है, पृथ्वी भी है, सब कुछ है। ये सब एक साथ कार्य करते हैं। यदि मुनिवरो ! एक भी विधान परमात्मा पृथक् कर दे, तो हमारे शरीर का हरि ओम् तत्सत् हो जायेगा। तो मुनिवरो ! **यज्ञ करो तो विधान से करो।** देवयज्ञ करने की मनोइच्छा है तो प्रत्येक मानव प्रत्येक देवकन्या को विधान से करना चाहिए।

–पूज्यपाद गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

धर्म और यज्ञ

हम उच्चारण कर रहे थे कि मानव को अगर दूसरे को लाभ पहुँचाना है, दूसरों को उन्नति पर पहुँचाना है, तो उस यज्ञ को उस महान् कार्य को विधान से करो। वेद-मन्त्रों को जानो और उनको जानकर उनके अनुकूल वेदों का लक्षण करो। महान् यज्ञ को रचाओ, शुभ कार्य करो। यदि यज्ञ विधान से नहीं किया गया, तो यह कदापि सम्पूर्ण नहीं होगा। मुनिवरो ! यह हमारा केवल नवीन मत नहीं है, यह तो उनका मत है जिन्होंने बेटा ! यज्ञ को सृष्टि के प्रारम्भ में उत्पन्न किया।

देखो ! यह तो तुम्हारी बुद्धि में आने वाला वाक्य है कि **परमात्मा ने जब सृष्टि प्रारम्भ की तो आत्मा के अनुरोध से की।** यदि परमात्मा विधान से इस सृष्टि को न बनाता, तो यह सँसार इस प्रकार नहीं चल सकता था जैसा आज चल रहा है। परमात्मा ने इस सृष्टि रूपी यज्ञ को उत्पन्न किया।

आज हम मनुष्य रूपी यज्ञ को उत्पन्न करें। आज हम भौतिक यज्ञ करें। देवताओं को सुगन्धित हव्य पहुँचायें। देवताओं को पौष्टिक पदार्थ प्रदान करें। यह हमारा कर्त्तव्य है। आज हम विशेष यज्ञ के ऊपर ही प्रकाश दे रहे हैं। **हमारा वेद पाठ यह ही कह रहा है कि यज्ञ को पूर्ण करो और पूर्ण विधान से करो। धर्म से करो, अधर्म से मत करो। दुर्भावना से न करो।**

देखो ! **जिस पद के तुम अधिकारी हो या तुम्हें चुना गया है वह चाहे तुम्हारे लिए हानिकारक है परन्तु तुम्हारा कर्त्तव्य है कि उसका पूर्ण रूपेण पालन करो। उसको लाभ-हानि न पहुँचाओ। यदि लाभ-हानि पहुँचाओगे तो तुम्हें कोई भी लाभ प्राप्त न होगा।**

–पूज्यपाद गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

उदंग ऋषि तथा नरान्तक का संवाद

मुनिवरो ! देखो, जिस समय रावण के पुत्र नरान्तक उदंग ऋषि के द्वार पर पहुँचे, उस समय ऋषि ने पूछा कि महाराज कहाँ विचर रहे हो? उस समय नरान्तक ने कहा कि महाराज मैंने अपनी बाल्यावस्था में ऐसे महान् यन्त्रों को खोजा है कि जिन यन्त्रों में मैंने नाना प्रकार की महत्त्वपूर्ण विशेषताएँ पाई हैं। महाराज ! मैंने भौतिक विज्ञान को खोजा है। ऐसे यन्त्रों को प्राप्त किया है कि जिनसे मैंने परमात्मा के बनाए सब पदार्थों को अपने अधीन कर लिया है। परमात्मा की कोई विशेष महान् सत्ता नहीं है।

मुनिवरो ! उस समय ऋषि ने कहा अरे! अभी तुम ऐसे अगाध समुद्र में नहीं गए जहाँ तुम परमात्मा को जान सको। तुमने परमात्मा के विज्ञान को तो खोजा ही नहीं। अभी तो तुम आत्मा के विज्ञान को तो क्या, मन के विज्ञान को ही प्राप्त कर रहे हो, मन के विज्ञान के आगे से भी कुछ देखो। मन के विज्ञान के आगे बुद्धि का विज्ञान है। इसके अनन्तर अन्तःकरण का विज्ञान आता है, अन्तःकरण के विज्ञान से मानो ब्रह्मचर्य के बल के विज्ञान से पृथ्वी का विज्ञान आता है। तब सभी कुछ विज्ञान जान सकोगे। जब इतने बड़े अगाध विज्ञान में पहुँच जाओगे तब उस समय सबसे बड़े वैज्ञानिक उस परमात्मा को अच्छी प्रकार जान सकोगे। हे नरान्तक ! तुमने अभी तक केवल मन के विज्ञान को ही जाना है। अरे ! यह तो तुम्हारे केवल मन की कल्पना मात्र ही है। तुम्हारे मन का अज्ञानतावश केवल मात्र स्वार्थ ही है तथा केवल मन से ही कह रहे हो कि ''परमात्मा कोई पदार्थ नहीं है।'' अन्तःकरण में विराजमान हो करके देखो कि तुम्हारा अन्तःकरण क्या कह रहा है, तुम्हारा आत्मा क्या कह रहा है? वह तो कह रहा है कि अरे ! महान्, तू पापी मत बन। पर तुम भी उस आत्मा की ध्वनि को, उस आदेश

को भुलाकर, उपेक्षा करके पापी बन रहे हो। अरे ! परमात्मा की सत्ता को समाप्त कर रहे हो। तुमने गम्भीर मुद्रा को जाना ही नहीं। बिना गम्भीर मुद्रा के केवल मन की कल्पना मात्र से परमात्मा की सत्ता को समाप्त करना चाहते हो। यह जीवन की कोई महत्ता नहीं है।

उस समय नरान्तक ने कहा, महाराज! मैं कैसे जान पाऊँगा? मैं तो यह जानता हूँ कि परमात्मा कर ही क्या रहा है? अर्थात् कुछ भी नहीं, भगवन् ! मैंने तो उस महत्ता को जाना है जिसे अब तक कोई नहीं जान सका।

उस समय ऋषि ने कहा, ''हे महान् बुद्धिमान ! तुम्हारी बुद्धि यथार्थ है। तुम जो उच्चारण कर रहे हो यथार्थ है। जब बुद्धि से परे जाओगे, बुद्धियों के भेद को जानोगे, वेदों का पाठ करके निर्णय करोगे, तब तुम्हें जानकारी हो जाएगी।'' मुनिवरो ! उन्होंने प्रमाण देते हुए कहा कि एक गुरु और शिष्य थे। गुरु शिष्य को शिक्षा दिया करते थे। शिष्य ने सूक्ष्म सी विद्या पाकर कहा ''महाराज ! मैं तो बहुत बुद्धिमान बन गया हूँ अब मुझे आज्ञा दीजिए।''

उस समय आचार्य ने कहा, ''अरे! अभी तुम बुद्धिमान नहीं बने हो। जब बुद्धिमान बन जाओगे तब स्वतः ही चले जाओगे।''

शिष्य ने सूक्ष्म सी विद्या पा करके कहा, ''महाराज ! अब तो मैं विद्या में पूर्ण हो गया हूँ।''

आचार्य ने फिर वही कहा कि अभी तुम पूर्ण नहीं हो।

मुनिवरो ! आगे जब वह परमात्मा के ज्ञान-विज्ञान में जा पहुँचा जहाँ जीवन के जीवन समाप्त हो जाते हैं, जिसकी कोई सीमा नहीं तब उसने कहा कि गुरुदेव! मैंने तो संसार में आकर अभी कुछ जाना ही नहीं।

तब ऋषि ने कहा, ''हे नरान्तक! तुम तभी महान् बनोगे जब तुम अगाध ज्ञान विज्ञान में पहुँचोगे, अभी तो तुमने सूक्ष्म सी विद्या को

जाना है। चन्द्रमा में जाने का भौतिक यन्त्र बनाया है। जिस समय तुम ऐसे यंत्र को खोज लोगे, जिसके द्वारा ऐसे लोकों में भ्रमण करने लगोगे जहाँ एक हजार सूर्य समा जाते हैं। तब हम जानेंगे कि तुम अगाध वैज्ञानिक बन गए हो।''

मुनिवरो ! ऋषि के इन वचनों को सुनकर नरान्तक ने कहा कि महाराज ! क्या ऐसा कोई यंत्र भी है, कोई ऐसा परमाणु भी है जिसके द्वारा बृहस्पति आदि लोकों में भ्रमण कर सकूं?

उस समय ऋषि ने कहा, ''हाँ ऐसे यन्त्र भी हैं।''

''ऐसे यन्त्र क्या हैं?'' महाराज !

देखो जितना तुम्हारा मन महान् है जिससे तुमने भौतिकता को जाना है, इस मन को बुद्धि में लय कर दो। सँसार में आ करके पहले परमात्मा की सत्ता का, उसके शासन के अटल नियमों का पालन करो। अर्थात् सत्य बनो। महान्, यथार्थ वाणी का विषय मन में लय करो। तन्मात्राएँ जब मन में लय हो जाएँगी, जब ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय के विषय भी अन्तःकरण में लय हो जाएँगे, उस समय इनके समूह का एक यन्त्र बन जाएगा। जिसको पुष्पक विमान कहा करते हैं। हे नरान्तक ! इस विमान में विराजमान होकर तुम सूर्य मण्डल, बृहस्पति-मण्डल आदि लोक-लोकान्तरों में रमण करने वाले बन जाओगे। इस यन्त्र में विराजमान होने वाला यह जीवात्मा है। इस दिव्य यन्त्र या यान को चलाने वाला परमपिता परमात्मा है। यदि तुम परमपिता परमात्मा की आज्ञाओं का पालन करोगे तो वह तुम्हारी प्रार्थना या निवेदन को अवश्य स्वीकार करेगा। उस समय जहाँ तुम जाना चाहोगे वहाँ परमात्मा तुम्हें अवश्य पहुँचा देंगे। जब तक स्वामी की आज्ञा का पालन नहीं करोगे, उसकी आज्ञा में कार्य नहीं करोगे वे तुम्हे कहीं भी नहीं पहुँचायेंगे। ही.ही.ही..... .....हास्य।

–पूज्यपाद गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

मानव योगी कैसे बनें?

आज मानव प्रायः यह कहता चला जा रहा है कि योग विधाता की एक ऐसी देन है जिसको पा करके मानव कहीं का कहीं पहुँच जाता है। वह मानव परमात्मा की सृष्टि का जानने वाला बन जाता है। आज हमें विचारना यह ही है कि विधाता की उस अमूल्य निधि को कैसे जानेंगे? आज हम योगी कैसे बनेंगे?

मुनिवरो ! योगी उसी काल में बनेंगे जैसा हमने यौगिकता की भूमिका को तुम्हारे समक्ष निर्णय कराया था। **योगी बनने के लिए सबसे प्रथम अपने विचारों को यथार्थ बनाना है।** अपनी त्रुटियों को खोजना है। आज हमें दूसरों की त्रुटियों पर नहीं जाना है। जब हम अपनी त्रुटियों को अच्छी प्रकार खोजने लगेंगे तो उसके पश्चात् धारणा, ध्यान और समाधियों में लय होने लगेंगे। यह आत्मा प्राणों सहित जब आगे को चलता है, शरीर के सभी चक्रों में पहुँचता हुआ नाना प्रकार की अड़चनों को शान्त करता हुआ आगे को बढ़ता चला जाता है। बढ़ते-बढ़ते परमात्मा के स्थलों में पहुँच जाता है जहाँ मानव का जीवन महान् से महान् और पवित्र बन जाता है। उस पर आज हमें विचार लगाना है। धारणा, ध्यान, समाधियों द्वारा मन को जान लेते हैं कि यह कितना तीव्र चलने वाला है।

आज तो मानव कह रहा है कि एक शरीर में दो आत्माओं का कैसे निरीक्षण किया जाता है परन्तु इस पर मानव को विचारने की आवश्यकता है। अरे ! जिसने यौगिक-क्रियाओं को जाना ही नहीं केवल उच्चारण ही उच्चारण करता जाता है कि मैं योगी हूँ परन्तु यह नहीं जानता कि योग मार्ग क्या है? योग में क्या-क्या परिस्थितियाँ मानव के द्वारा आती हैं? आत्मा के द्वारा क्या-क्या

नाना प्रकार के स्थल आते हैं? जिस मानव ने एक स्थान में विराजमान हो करके गायत्री मन्त्रों को अच्छी प्रकार पाठ न किया हो और न उसकी साधना ही हो और वह कहता है कि मैं योगी हूँ, परमात्मा के प्रत्येक ज्ञान और विज्ञान को जानता हूँ तो मुनिवरो ! यह मानव का केवल अहँकार मात्र है। आज मानव को स्वार्थमात्र से विचार नहीं लगाना है। सबसे पूर्व गम्भीरता से आवश्यकता है। जिस काल में गम्भीरता से विचारने लगेंगे उस काल में अपनी त्रुटियों को देखने लगेंगे। उस काल में हमें ज्ञान हो जाएगा कि सँसार कौन से विस्तार वाला है। परन्तु जिस मानव ने यह नहीं जाना कि मेरे द्वारा कितनी त्रुटियाँ हैं और कहता चला जा रहा है कि मैं परमात्मा की सर्वज्ञ विद्याओं को जानने वाला हूँ तो यह केवल अहँकार है। यह केवल अपने मन ही मन गौरव प्रकट कर रहा है। किसी दार्शनिक समाज में या किसी यौगिक मण्डल में जाकर उसकी महान् अपकीर्ति हो जाती है। **योगी बनने के लिए आज हमें धारणा, ध्यान, समाधियों में लय होना है।** उनके ऊपर पुनः विचार करना है। आज हमें अपने मन से गायत्री माता का पाठ करके आगे बढ़ना है।

मुनिवरो ! आज योगी बनने के लिए हमारे द्वारा नाना प्रकार के प्रश्न आते हैं। यह प्रश्न भी आता है कि यह शरीर में दो आत्माओं का आगमन होता है या नहीं। इसका क्या अभिप्राय है? इसमें किस प्रकार की क्रियाएँ मानी जायेंगी।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने एक काल में कहा था कि आज का मानव ज्ञान से विहीन बनता चला जा रहा है। योग से तो सँसार बहुत ही दूरी पर चला गया है। हमने वह काल देखा है जिस काल में प्रत्येक मानव, प्रत्येक देवकन्या यौगिक क्रियाओं की कुछ न कुछ विधियों को जानते थे। आज वह समय कहाँ चला गया? प्रभु से नित्यप्रति कहा करते हैं कि हे विधाता ! वह समय किस काल में आएगा जिस काल में वेदमन्त्रों का पाठ प्रत्येक मानव,

प्रत्येक देवकन्या के कण्ठ में होगा। जब माता गायत्री का एक महान् उच्च स्वरों से गान गाया जायेगा। आज इस समय का परिवर्तन चाहते हैं। हे देव ! हमारे समक्ष उसी समय को प्रकट करो जहाँ गम्भीर व्यक्ति हों, जहाँ प्रत्येक मानव प्रत्येक वस्तु को विचारने वाला हो। हे विधाता ! हमें उस समाज की आवश्यकता नहीं जहाँ अभिमान हो। अपने से बड़ा सँसार में किसी को न मान रहा हो। हे विधाता ! जब सँसार में ऐसे-ऐसे अभिमानी उत्पन्न हो जायेंगे तो उनका अभिमान आपके अन्तरिक्ष में रमण करेगा। प्रतीत नहीं होता कि वह अभिमान किस-किस मानव को नष्ट-भ्रष्ट कर देगा। हे विधाता ! हमें तो वो व्यक्ति चाहिएँ जो निराभिमानी हों, विद्या से परिपक्व हों अर्थात् जिनके द्वारा अनन्त विद्या हो। हे देव ! हे सखा ! हे मित्र हम आपकी शरण में आए हैं। हमारे द्वारा उस महत्त्व को प्रदान करो जिससे विधाता हम महान् बनें, विचित्र बनें, यौगिक बनें।

मुनिवरो ! यौगिक बनने के लिए पुनः विचार करना है। **सबसे पूर्व अभिमान को त्यागना है।** जिस मानव ने 'मैं' को नहीं त्यागा, अपनी त्रुटियों को तथा अपने हृदय के दोषों को शान्त नहीं किया और कह रहा है कि आज मैं योगी बन जाऊँ तो बेटा ! वह योगी कदापि नहीं बनेगा। वह तो नाना प्रकार की अशुद्धियाँ अपने जीवन में धारण कर रहा है। न प्रतीत अगले जन्मों में कौन-कौन सी योनियाँ प्राप्त हों और क्या-क्या भोगना पड़े। आज हमें यौगिक बनना है। **यौगिक क्रियाओं के लिए हमें सबसे पूर्व प्राणायाम की आवश्यकता है।** अहा ! पूर्व हमें यह देखना है कि हमारे द्वारा कितनी त्रुटियाँ हैं? हमें तो सँसार की त्रुटियों पर कदापि नहीं जाना है। हमें तो अपनी त्रुटियाँ बहुत गम्भीरता से विचारनी है। **गम्भीरता उसी काल में आती है जब मानव अपनी त्रुटियाँ देखने लगता है।**

आज यौगिक बनने के लिए सँसार की विचित्रता को नहीं देखना है। हमारे द्वारा नाना विचित्रता है उन्हें धारण करना है। हमारे द्वारा क्या विचित्रतायें हैं?

मुनिवरो ! जैसे सँसार में माता के कितने रूप माने जाते हैं। वह माता रूप में भी है, पत्नी रूप में भी है, पुत्री रूप में भी है, भौजाई रूप में भी है, इसी प्रकार मानव के द्वारा परमात्मा ने विचित्रतायें प्रकट की हैं। मुनिवरो ! यौगिक क्रिया में जब यह आत्मा प्राणों के सहित कुम्भक और रेचक क्रियाओं से मूलाधार में पहुँचता है तो वहाँ प्राणों की ऊँची प्रगति हो जाती है और मानव को प्रतीत होने लगता है कि हमारा शरीर किन-किन तत्त्वों से बना हुआ है और उस स्थल पर क्या-क्या कार्य हो रहा है? आगे बढ़ता हुआ यह आत्मा नाभि चक्र में पहुँचता है। नारद मुनि आचार्यों ने इसे शरीर का केन्द्र माना है। वहाँ प्रतीत होता है कि हमारे शरीर में यह नस और नाड़ियाँ कितनी महान् और विचित्र हैं। परमात्मा ने इन वस्तुओं को कैसे बनाया। आगे बढ़ता हुआ यह आत्मा ऐसे तत्त्वों को अनुभव कर लेता है जो नेत्रों से दृष्टिगोचर नहीं आते। मुनिवरो ! आगे बढ़ता हुआ यह आत्मा हृदय चक्र, घ्राण चक्र, ब्रह्मरन्ध्र और शून्य चक्रों में जा पहुँचता है। मुनिवरो ! उस समय योगी को परमात्मा की सृष्टि का स्वतः अनुभव हो जाता है।

आज तो मानव कहता है कि कैसे हो जाता है? मेरे प्यारे महानन्द जी ऐसे विचित्र आत्मा हैं कि देखो यह यहाँ विराजमान हैं और हम आज्ञा दें तो लोकान्तरों की क्या प्रत्येक राष्ट्रों की वार्ता हमारे समक्ष नियुक्त कर देंगे, यह स्वतः जान लेते हैं। यह क्या है? इसको जानने के लिए हमें बहुत गम्भीरता से विचार करना है और योगी बनना है। इसके लिए त्यागी और तपस्वी बनने की आवश्यकता है। **बिना त्याग व तपस्या के योगी बनना मानव का केवल स्वप्न मात्र है।**

–पूज्यपाद गुरुदेव

॥ ओ३म् ॥

Destiny of the soul which passes out through different apertures of the body

"The purpose of reproducing this fable is that the sins committed by a person must fall on him. They can never be washed away. The fruits of actions performed by a person must be borne by him. They cannot be shared by anyone else in the world. So, O Sages ! If you will perform the actions necessary to acquire knowledge of the Self, only then you will be able to know the true nature of the Supreme. Hence you must perform only high and noble actions so that you may be able to rule over Nature and you must not act in such a way that Nature may rule over you. Never allow yourself to be subjugated by the low instincts of Nature. and always try to subdue them and attain the Supreme.

The subject matter of today's discourse was to think over the family members of the soul which consist of the five organs of perception, the five organs of action. the five life-winds, the mind and the intellect. When the soul roams in the ether it is enclosed in a body consisting of the above mentioned seventeen elements in their subtle forms. Besides the above mentioned subtle body consisting of the said seventeen elements the soul has also a causal body which consists of knowledge and perseverance only. When the mind, intellect and all other elements

retire, only the two innate qualities of the soul-knowledge and perseverance remain with it.

Mahanand "Then O Sir! Is the mind not existing from eternity?" Who feels pleasure and pain.

"O Son! The existence of the mind depends upon the existence of action. As long as action exists it has to be recorded within and hence there lies the necessity of mind. As soon as the necessity of recording disappears the existence of mind also remains no more. Mind is needed only for so long as the soul is bound with the cycle of transmigration. As soon as the soul is liberated from that cycle its relation with the mind teminates, and it enjoys eternal bliss."

Who enjoys eternal bliss.

Mahanand "O Sir, when the relation of the mind with the soul is terminated who enjoys the eternal bliss?

"O Son! It is the soul which enjoys the eternal bliss."

"Then Sir! Has the soul also got the power of reasoning? Who feels pleasure and pain -the mind or the soul?"

"Son! It is the mind which has the power of feeling pleasure and pain".

"Then how can it be accepted that in the state of liberation the soul enjoys eternal bliss without the aid of the mind ?"

"It must be understood here that there is a difference between bliss and pleasure or pain. The feeling of pleasure and pain is derived from Nature and is realized by the mind through the medium of the organs of perception. Thus pleasure and pain are products of nature and these, together with the mind and other organs of the body are all material while bliss is spiritual and this being an innate quality of the soul· can be enjoyed by it without the aid of the mind."

"Right Sir! The mind is made of matter and realizes the material pleasure and pain. But, Sir ! does the mind not realize God?"

"O Son! Mind is material and the mind together with other material objects is related to the soul. Material objects cannot attain God. Soul alone can attain God and when it attains God its material relations cease. Just as a child, when in the womb of its mother gets its nourishment from the body of the mother but as soon as the pregnancy matures and delivery takes place all the connections of the child with the body of the mother cease, similarly when the soul attains God all its relations with the material objects come to an end.

And here comes to end my discourse of today.

Pujyapad Gurudev

Yogic Wisdom of the Ancient Rishies.

Parvachan Dated 27th September, 1964

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज (शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	50.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	110.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	100.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	40.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	25.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	25.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला बागपत, (उ.प्र.)। दूरभाष : 01234 240395
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। दूरभाष : 0131 2606414
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष : 011-26498737
5. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-4165802
6. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) दूरभाष : 9410452076
7. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) दूरभाष : 09412139333
8. श्री विवेक त्यागी, 16ए अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष : 0122-2316196
9. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-2642052
10. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110ए मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) दूरभाष : 9899228860, 9871367937
11. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। दूरभाष : 9910589486
12. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) दूरभाष : 9313530505
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-23282088
14. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
15. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष : 011-23977216
16. जवाहर बुक डिपो, बुढ़ाना गेट, आर्य समाज मेरठ शहर (उ.प्र.)।

नम्र-निवेदन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज ने अपने प्रवचनों में वेद मन्त्रों का गान करते हुए उनकी प्रचलित भाषा में व्याख्या की है। उसी अमृत वाणी को जनकल्याण के लिए ''संहिता'' रूप में प्रकाशित करने के लिए वैदिक अनुसन्धान समिति सभी श्रद्धालु एवम् दानदाताओं से सहयोग के लिए आह्वान करती है जिससे कि प्रकाशन का कार्य सुचारू रूप से ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होता रहे। सहयोग की राशि समिति के बैंक खाते में स्वेच्छानुसार भेजने के लिए बैंक का विवरण निम्न प्रकार से प्रस्तुत है :-

पंजाब नैशनल बैंक

खान मार्केट, नई दिल्ली

बैंक खाता नं. - 0149000100229389

IFS Code – PUNB–0014900

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

नई दिल्ली

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएडा	125 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मास्टर कवन्धी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

वैदिक अनुसन्धान समिति के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 800 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 100 रु. है जिसको आप समिति के पते पर व निम्न पते पर डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं।

डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री

ए-59, पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017

दूरभाष : 011-26498737

शृङ्गीऋषि बेवसाईट

Website : www.shringirishi.in

Email : www.contact@shringirishi.in

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

हम अपने जीवन को यज्ञमय बनायें, हमारा जीवन परमात्मा ने रचा है। वह दान, त्याग और तपस्या द्वारा यज्ञकर्म करने के लिए रचा है। अन्यथा उसके रचने का कोई उद्देश्य नहीं है। जितने शुभ कर्म मानव शरीर से किये जाते हैं वे और शरीरों से नहीं किये जाते। जब नहीं किये जाते तो जो भी धर्म करता है वह सब यज्ञकर्म कहलाता है। परमात्मा का चिंतन हृदय से करो, तो हृदय पवित्र हो जायेगा। आज तुम परमात्मा का चिन्तन कर रहे हो।

–पूज्यपाद गुरुदेव

वर्ष 42 : अंक : 496
जनवरी 2014

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिंटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-01-2014
Published on 5th day of the same month